वैराग्य : मन का भाव

मानव धर्म का मूल है कर्म। इसीलिये कर्मयोग का मानव जीवन में विशेष स्थान होता है। निरन्तर कर्म करते रहते हुये भी कभी–कभी मानव के मन में वैराग्य भाव जन्म ले लेता है। वैराग्य मनोभाव होता है जो किसी भी चीज के अधीन नही होता वरन् इस मनोभाव का दर्शन उसके कार्यो से होने लगता है।

वैराग्य के सम्बंध में पतंजलि ने कहा है–

"दृष्टानुश्रविक विषयवितृष्णस्य वशीकारसंज्ञा वैराग्यम्"

दृष्ट और आनुश्राविक विषयों के प्रति वितृष्णा की वशीकार भावना को वैराग्य कहते है। वैराग्य अर्थात आसक्ति, रिंवचाव का अभाव।

वैराग्य के चार भेद या स्तर है। सबसे नीचे स्तर का नाम यतमान है। उसके ऊपर क्रमशः व्यतिरेक, एकेन्द्रिय और वशीकार आते है।

यतमान का अर्थ है– इन्द्रियों को विषयों से हटाने का प्रयत्न करना।

जब प्रयत्न में सफलता प्राप्त हो जाती है तो उसे व्यतिरेक कहते है। जब व्यतिरेक विकसित हो जाता है तो उसे एकेन्द्रिय कहते है।

प्रयत्न की पूर्ण सफलता का नाम वशीकार है। वशीकार की स्थिति में साधक को स्वयं ऐसी प्रतीति होने लगती है कि यह विषय मुझे अपनी ओर खींच नही सकते, अब मै यह खेल बहुत देख चुका।

विषयों को दो विभागों में वर्गीकृत किया गया है:

(1) वह विषय जो दृश्य है अर्थात् जो इस लोक में इस शरीर से भोगे जा सकते है।

(2) वह विषय जो अनुश्राविक है तो इस लोक में प्रायः नही देखे जाते, परन्तु जिनके सम्बन्ध में अनुश्रुति से ज्ञान होता है।

जब मन इन दोनों विषयों से पूर्ण रूप से वितृष्ण हो जाये तब वैराग्य पूर्ण होता है।

ऐसा कभी निश्चित रूप से नही कहा जा सकता कि आज वैराग्य पूरा हो गया, क्योंकि ज्यों–ज्यों अभ्यास में सफलता होती है त्यो–त्यों वैराग्य पूर्ण होता है और ज्यों–ज्यों वैराग्य दृढ़ होता है त्यों–त्यों अभ्यास में सफलता प्राप्त होती है। विषयों के प्रति मनुष्य में जो राग है वह अपने को अनेक रूपों में प्रकट करता है जैसे–कोई कोई मनुष्य ऐसे होते है जिन्हें धन की बड़ी चाहत होती है परन्तु किसी कारण धन प्राप्ती नही हो सकती या ऐसी स्थिति में है जिसमें धन का संग्रह नही कर सकते। इसके साथ ही अपने चित्त से धन का मोह नही निकाल सकते है तो प्रायः ऐसा होता है कि ऐसे मनुष्य बहुधा धन की निन्दा किया करते है कि मैं धन की परवाह नही करता, लखपति करोड़पति अपने लिये होगे आदि। इसी बहाने लाखों करोड़ों की चर्चा होती रहती है। वस्तुतः यह वैराग्य नही है बल्कि निन्दा के रूप में धन की स्तुति हो रही है। जो उनकी धन की चाह को बलवती करती रहती है।

इसी प्रकार कुछ लोग जो गृहस्थ जीवन किन्ही कारणों से व्यतीत नही कर पाते परन्तु उनमें कामासक्ति प्रबल है तो उनके मुँह से स्त्रियों की प्रायः निन्दा निकला करती है। निन्दा में स्त्रियों के शरीर के नखशिख का वर्णन कर जाते है। यह भी वैराग्य नहीं है, अपितु दुर्बलता का ज्ञापन है।

अतः केवल भोग का अभाव ही वैराग्य का प्रमाण नही होता है, क्योकि हठात् अपने को भोगों से दूर रखा जा सकता है। परन्तु राग तो हृदय के भीतर

होता है, जिनका प्रायः दूसरों को पता भी नही चलता। राग को हृदय से निकालना बड़ा कठिन होता है।

वैराग्य का बहुत बड़ा साधन यह है कि चित्त को इन्द्रियविषयों से हटाकर दूसरी बातों में लगाया जाये। ज्यों–ज्यों चित्त निष्काम कर्मों में लगता है और योगाभ्यास द्वारा उर्ध्व स्थिति में पहुंचता है त्यों–त्यों इन्द्रियविषयों की ओर से चित्त स्वतः हटता जाता है।

जहां विषयों के उपभोग में सुख मिलता है वहीं उनके साथ अनेक दुःख भी लगे होते है। जिसका प्रथम परिणाम दुःख ही है। भोग शरीर को क्षीण करता है और बुद्धि को नीचे स्तर के कर्मो में लगाकर उसको अच्छे कामों में लगने से रोकता है। भोग के विषय कहा गया हैः–

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ताः।

(भोग तो नहीं भोगे गये हम ही भोगे गये)

भोग शरीर और संकल्प को दुर्बल बनाकर छोड़ देता है ओर उसका परिणाम यावत् जीवन रहता है। भोग के पीछे पश्चाताप भी रहता है।

सब लोगो को विषयों में दुःख की अनुभूति क्यों नहीं होती है, इसके सम्बन्ध में भाष्यकार व्यास ने उदाहरण दिया है– मकड़ी का जाला बड़ा नरम होता है, वह शरीर में कहीं भी स्पर्श कराया जाये तो पता भी नहीं चलता, परन्तु यदि आंख की पुतली पर छू जाय तो गड़ने लगता है। इसी प्रकार विवेकशील मनुष्य को वह बातें भी दुःखमय प्रतीत होती है जो दूसरे मनुष्यों के लिये सुखमय है।

यह विचारणीय है कि हमारा मन तो वैराग्य चाहता है परन्तु चित्त पूर्ण रूप से वैराग्य से युक्त नहीं हो पाता। इसके लिये मनीषियों द्वारा दो ही मार्ग बताये गये है– योग और साधना।

हम इस मार्ग पर तभी चल सकते है, जब ईश्वरीय कृपा हो।

(डा0 श्रीमती सुधा मिश्रा)
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
एन. एन. डी. सी.

सूफीमत : एक संक्षिप्त परिचय

भारतीय संस्कृति की एक मुख्य विशेषता सदैव से यह रही है कि इसने अपने प्राचीन तत्वों अथवा विशेषताओं को नष्ट किये बिना नवीन तत्वों और विशेषताओं को अपने में आत्मसात् किया है।

धार्मिक दृष्टि से यदि एक विचारधारा या एक सम्प्रदाय यहॉ विकसित हो गया तो चाहे उसका स्वरूप कितना ही बदल गया हो, परन्तु उसे नष्ट करने का प्रयत्न नही किया गया। इस कारण इस समय भी भारत में प्राचीनतम धार्मिक सम्प्रदाय किसी न किसी रूप में विद्यमान है।

भारत में सूफीवाद का प्रवेश अरबों की सिन्ध विजय के बाद हुआ था। भारत में सूफियों के कई सम्प्रदाय थे। 16वीं सदी के उत्तरार्ध में अबुल फजल ने 14 सिलसिलों का उल्लेख किया हैं इनमें **चिश्तिया, सुहरावर्दिया, नक्शबंदिया, कादिरी, कलंदरिया** और **शत्तारिया** सम्प्रदाय महत्वपूर्ण है। इन्ही **सम्प्रदायों** को **सिलसिला** कहा जाता है। भारत में चिश्ती और सुहरावर्दी सिलसिले अधिक लोकप्रिय थे।

सूफीवाद का तसव्वुक इस्लाम के रहस्यवादी, उदारवादी तथा समन्वयवादी दर्शन की संज्ञा है। सूफी व्यक्ति को साधारणतया **ब्रहमज्ञानी** तथा **अध्यात्मवादी** माना जाता रहा है, परन्तु सूफी शब्द की उत्पत्ति को लेकर विद्वानों में मतभेद रहा है। कुछ विद्वानों का मानना है कि आरम्भ में अरब में जो व्यक्ति 'सफ' अर्थात भेड़ के बालों का ऊनी वस्त्र पहनते थे उन्हें सूफी पुकारा गया। कुछ अन्य विद्वानों ने कहा कि 'सफा' का अर्थ पवित्रता है इस कारण पवित्र आचार–विचार के व्यक्ति सूफी कहलाये। कुछ अन्य विद्वानों ने यह भी कहा है कि मदीना में मुहम्मद साहब द्वारा बनवाई हुई मस्जिद के बाहर **'सफा'** (एक पहाड़ी) पर जिन व्यक्तियों ने शरण ली और खुदा की इबादत में लीन रहे वे सूफी कहलाये। 'सूफी' शब्द की उत्पत्ति चाहे किसी भी प्रकार से हुई हो, परन्तु यह निश्चित है कि **साधक शब्द** के लिये **सूफी शब्द** का प्रयोग 9वीं सदी से ही आरम्भ हो गया था और तभी से सूफी मत का विकास एक धर्म के रूप में हुआ। अपनी उत्पत्ति के आरम्भ से ही ये मूल धारा इस्लाम से थोड़ा अलग थे। इनका लक्ष्य आध्यात्मिक प्रगति एवं मानवता की सेवा करना रहा है।

सूफियों ने कुरान की रहस्यवादी एवं उदर व्याख्या की जिसे **तरीकत** कहा गया। सूफीवाद में संसार की सभी प्रमुख धार्मिक विचार धाराओं को सम्मिलित किया गया। इस्लाम धर्म के अतिरिक्त इस धर्म पर हिन्दू वेदान्त, बौद्ध, यूनानी, ईसाई आदि मतो के सिद्धान्तों का भी प्रभाव है। मुस्लिम रहस्यवाद का जन्म **बहादातुल बुजूद** (आत्मा–परमात्मा) की एकता के सिद्धान्त से हुआ है। इसमें **हक** को परमात्मा और **खल्क** को सृष्टि माना गया है। इस सिद्धान्त के प्रतिपादक शेख मुहीउद्दीन इब्नुल अरबी थे। **फतुहात–ए–माक्किया** ने इस विचार को निम्न शब्दों में व्यक्त किया– ईश्वर के सिवा कुछ नही है, ईश्वर के सिवा वहॉ किसी का अस्तित्व नही है, यहॉ तक कि 'वहॉ' जैसा भी कुछ नही है, सभी चीजों का सार

एक ही है। परमात्मा में लीन हो जाने के इस आदर्श को **सूफी मारिफात** या वस्ल कहते है। ईश्वर को **निर्विकार – निर्विकल्प** मानते हुये उसके साथ तादाम्य स्थापित करने पर उन्होंने बल दिया। यह प्रेम के द्वारा ही सम्भव है। अहभाव की समाप्ति ही साधक की सफलता का रहस्य हैं इस मत के अनुसार मनुष्य को अपनी इच्छाशक्ति का दमन कर अपने को पूर्णतया ईश्वर में समर्पित कर देना चाहिए। मनुष्य की इच्छॉए जब समाप्त हो जाती है, तब वह ब्रहम (अल्लाह) में मिल जाती है। इसे **'अन–अहलक'** अर्थात **'मैं ही ब्रह्म हूँ'** कहा गया है। यही सूफी दर्शन का चरम लक्ष्य है।

सूफी सृष्टि के प्रत्येक कण में ईश्वर के रहस्य को देखते थे। इसकी कारण उन्होंने सभी जीवों के साथ प्रेम व दया करने का उपदेश दिया। सूफी मत में गुरू को **पीर** और शिष्य को **मुरीद** कहते है। शिष्यता ग्रहण करनें के समय एक अनुष्ठान होता था, जिसे **'बैयत'** कहते थे । इसमें शिष्य अपना सिर मुंडवाते थे। यह भारतीय परम्परा के अनुकूल थी। सूफियों ने भी मोक्ष की परिकल्पना की थी मनुष्य के **पार्थिव अस्तित्व** के अन्त को **फना** कहा गया है। जिसमें ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण हो जाने पर मनुष्य उसमें एकाकार हो जाता था। जब अस्तित्व अनन्तावस्था को प्राप्त कर लेता था उसे **'वका'** कहते थे।

सूफियों ने अपने आदर्शो, शब्दों तथा आचरण से एक नैतिक मानक प्रस्तुत किया। उन्होंने अन्ध–विश्वास तथा धर्म और भक्ति के बीच के अन्तर को दूर करने का प्रयास किया। उन्होनें जो उपदेश दिये तथा उसके अनुसार ही व्यवहार करने की आवश्यकता पर बल दिया। सूफी सन्तों ने सूफी मत को अजीविका का साधन नहीं बनाया। उन्होंने जिविकोपार्जन के महत्व पर बल दिया कुछ सन्तों ने अपने अह्म को कुचलने के लिये भिक्षावृत्ति करना पसन्द किया। इससे उन्होंने यह भी अनुभव किया कि **प्रत्येक वस्तु ईश्वर की है और व्यक्ति उसके अभिरक्षक मात्र होते है।** आध्यात्मिक उपलब्धि के लिये ब्रह्मचर्य और संसार के पूर्ण त्याग पर उन्होंने बल नहीं दिया विवाह और गृहस्थ जीवन से उन्हें घृणा नहीं थी। विशिष्ट भौतिकतावादी दृष्टिकोण पसन्द नहीं किया जाता था, लेकिन जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करना आवश्यक माना जाता था।

भारत में विशेषकर चिश्ती और सुहरावर्दी सिलसिलों के सूफियों ने ईश्वर के अराधना के रूप में **समा और रक्स** (संगीत और नृत्य) को अपनाया। समा से उनकी आध्यात्मिक शक्ति संजीव हो उठती थी तथा उनके व ईश्वर के बीच पर्दा उठ जाता था जिससे उन्हें **भाव प्रवण तन्मयता** की चरमावस्था प्राप्त करने में मदद मिलती थी।

(डा0 श्रीमती सुधा मिश्रा)

भारत में कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न : उभरते परिप्रेक्ष्य और मुद्दे

समस्त विश्व का मानवीय समाज स्त्री और पुरूष से मिलकर बना है, दोनों की भागीदारी समान है, फिर भी समाज स्त्री और पुरूष में बॅट गया। भारतीय समाज पुरूष प्रधान कहलाने लगा। हमारे समाज की एक परम्परा रही है कि पुरूष रोटी कमाकर लायेगा और स्त्री रोटी पकाकर खिलायेगी अर्थात पुरूष धन कमायेगा और स्त्री घर चलायेगी। भारतीय समाज में स्त्री के विभिन्न रूप हैं, जैसे मॉ, बहन, बेटी और सहधर्मिणी। इन्हीं रूपों में विहित अपनी भूमिका का प्रत्येक स्त्री बड़ी ही कुशलता से निर्वहन करती है। स्त्रियां अपने भूमिका के निर्वहन में तन मन से लगी रहीं, उनका यह निर्वहन शनैः शनैः उनके दायित्वों का दायरा बढ़ाते चले गये।

निःसन्देह आर्थिक आवश्यकता को पूर्ण करने के लिये स्त्रियां घर से बाहर कदम रखती होंगी। परन्तु धीरे–धीरे सामाजिक व्यवहार और मानसिकता में परिवर्तन आता चला गया जिसके परिणामस्वरूप स्त्रियों में शिक्षा और नौकरी के प्रति सोच में भी परिवर्तन आया।

स्त्रियां समाज में प्रत्येक क्षेत्र में पुरूषों से कन्धे से कन्धा मिलाकर चलने लगी और पुरूषों की हर भावना से रूबरू होती गयी। कभी बराबरी, कभी ईर्ष्या, कभी विश्वासघात आदि। इन्हीं कुत्सित भावनओं का प्रभाव स्त्रियों के शोषण के रूप में दिखाई देने लगा।

कार्यस्थलों पर महिलाओं के साथ अश्लील घटनाएं दिखाई देने पर विभिन्न संगठनों ने आवाज उठानी आरम्भ कर दी।

1980 में बम्बई, नर्सेस के पक्ष में एक फोरम अगेन्स्ट अप्रेशन ऑफ वूमेन 1980 बना। जिसमें हस्पतालों की नर्सेस को वार्डब्वाय, मरीजों के तिमारदारों आदि से बचाने का कार्य किया जाता था। परन्तु इस फोरम को जनता, मीडिया, ट्रेड यूनियन आदि से अच्छा सहयोग नहीं मिला। इसी प्रकार 1991 में बायलान्चो साद (महिलाओं की आवाज) नामक संगठन ने मुख्य मन्त्री के विरूद्ध (सेक्रेटरी के साथ अभद्र व्यवहार करने के कारण) जनमत संग्रह किया था और धरना, प्रदर्शन रैली आदि निकाली थी।

बहुत चर्चित और बर्बरतापूर्ण मामला 1990 में राजस्थान में हुआ था। जिसमें एक महिला अफसर ने बाल विवाह रोकने का प्रयास किया तो वहां के कुछ लोगों ने पहले उसकी जाति और समुदाय पर आपत्तिजनक शब्द कहे, फिर उसको सबक सिखाने के लिये कई–बार उसका रेप किया। अदालत ने महिला के विरूद्ध निर्णय दिया।

इस पर 2003 में एक वूमेन्स राइट ग्रुप विशाखा ने इस मामलें में सर्वोच्च न्यायालय में एक पी आई एल दाखिल किया। जिसमें अदालत ने कुछ बिन्दु निर्धारित किये जो निम्न हैं–

– संविधान में लिंग समानता के अन्तर्गत यौन उत्पीड़न से रक्षा, गरिमा के साथ काम करना और सुरक्षा भी शामिल है।

- अपने पुरूष सहयोगियों की तुलना में एक कामकाजी महिला के जीवन को अतिरिक्त खतरा होना भी लैंगिक समानता और मौलिक अधिकारों का स्पष्ट उल्लंघन है।

- सुरक्षित कार्य वातावरण, गरिमा के साथ कार्य करना एक कामकाजी महिला का मौलिक अधिकार है।

- कभी भी कामकाजी पुरूषों और महिलाओं में भेदभाव न किया जाये। यदि किसी कम्पनी में एक भी महिला कार्य करती है तो कम्पनी की नीतियों में प्रलेखित किया जाना चाहिए। जैसे–पुलिस और सीमा के सशस्त्र बलों में होता है।

- विशाखा निर्णय में यह अनुमोदन किया गया कि सभी कार्यस्थलों पर एक शिकायत समिति होगी, जिसकी अगुवाई एक महिला कर्मचारी करेगी और उस समिति की कम से कम आधे से अधिक सदस्य महिलाएं होंगी।

- किसी भी महिला कर्मचारी द्वारा यौन उत्पीड़न की सभी शिकायतों को इस समिति के लिये निर्देशित किया जायेगा। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि तत्काल पर्यवेक्षक भी शोषक हो सकता है।

- समिति पीड़ित को आगे की कार्यवाहियों पर सलाह देगी और प्रबन्धतन्त्र को शोधकर्ता के विरूद्ध कार्यवाही करने की सिफारिश करेगी।

विशाखा मामलें में ही कार्य स्थल पर यौन उत्पीड़न को परिभाषित किया गया।

कार्यस्थल पर मात्र एक महिला होने के कारण किसी महिला को पुरूष की तुलना में यदि अलाभ की स्थिति में रखा जाता है, तो यह भी यौन उत्पीड़न के रूप में कहा जा सकता है।

कार्यस्थल पर किसी पुरूष कर्मचारी द्वारा अवांछित व्यवहार किया जाना।। जैसे– कोई शारीरिक सम्पर्क और अग्रिम, यौन रंगीन टिप्पणी, अश्लील साहित्य दिखाकर भद्दी टिप्पणी या संकेत, किसी भी प्रकार से यौन मांग, कोई अफवाह या बात, यौन रंगीन टिप्पणी के साथ एक कामकाजी महिला के बारे में या किसी के साथ एक महिला के यौन सम्बन्धों के बारे में अफवाहें फैलाना।

यौन उत्पीड़न क्या है?

भारत में यौन उत्पीड़न छेड़छाड़ के रूप में कहा जाता है। इसके अन्तर्गत अनिष्ट यौन संकेत या व्यवहार, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से टिप्पणी, पोर्नोग्राफी दिखाना, शारीरिक सम्पर्क की मांग करना या अश्लील व आपत्तिजनक टिप्पणी करना आदि।

राष्ट्रीय सुर्खियों में आये कुछ यौन उत्पीड़न के मामले

- रूप्पन देव बजाज (आई0ए0एस0 अधिकारी) चण्डीगढ़ सुपर कोच के0 पी0 एस0 गिल के खिलाफ।
- अखिल भारतीय लोकतान्त्रिक महिला संघ की कार्यकर्ता, पर्यावरण मंत्री देहरादून के खिलाफ।
- एयरहोस्टेस मुम्बई अपने सहयोगी महेश कुमार लाला के खिलाफ।

- आई0ए0एस0अधिकारी तिरूवनंतपुरम् द्वारा राज्य मंत्री के लिखाफ।

1997 से पहले पीड़ित महिलाओं को अपनी शिकायत भारतीय दण्ड संहिता की धारा 354 के तहत करनी होती थी और धारा 509 के तहत सजा होती थी। इनमें, 'महिलाओं की शील भंग' की व्याख्या पुलिस अधिकारी के विवेक पर छोड़ दिया जाता था। जिसका पब्लिक ने विरोध किया। विभिन्न स्थिति व परिस्थितियों के पश्चात् कार्यस्थल (रोकथाम, निषेध और निवारण) अधिनियम 2013 बना।

उभरते परिप्रेक्ष्य और मुद्दे

जीवन में प्रत्येक चीज के दो पहलू होते हैं उसी प्रकार समाज में भी यौन शोषण के दूसरे पहलू भी दिखाई देने लगे। उदाहरणस्वरूप एक महिला कर्मचारी अपने अपने कार्यालय के सहयोगी से बहुत ही सहजता से वार्ता करती थी, वार्ता में अपने अनेक व्यक्तिगत चीजों की भी चर्चा करती थी, सम्भवतः आपस में विश्वास अधिक था। कुछ समय बाद दोनों के मध्य विवाद हो गया। जो बातें उन दोनों के मध्य थी वे अब पूरे कार्यालय में चर्चा का विषय थी।

एक अन्य मामलें में महिलाकर्मी अपने सहयोगी पुरूष कर्मी से कार्यालय व अपने निजी कार्यो को बड़ी सहजता से करवाती थी। धीरे–धीरे वह महिला अपने अधिकतर कार्यो के लिये पुरूष सहकर्मी पर आश्रित हो गई। वह पुरूष भी उसके कार्यो को करना अपना कर्तव्य समझने लगा। एक दिन अचानक महिला ने पुरूष पर यौन उत्पीड़न का आरोप लगा दिया।

– इसी प्रकार एक मामले में कम्पनी में नयी महिला कर्मचारी नियुक्त होती है, कुछ माह में उसकी तनख्वाह बढ़ा दी जाती है, वह अपने अधिकारी के प्रति कृतज्ञ होती है। अधिकारी द्वारा शारीरिक सम्पर्क की मांग की जाती है। मांग पूरी न किये जाने पर नौकरी समाप्त होने का भय।

उपर्युक्त मामलों से निम्न विचारणीय बिन्दु निकलते हैं–

यौन शोषण के मामलों में किसी गलती अधिक होती है?

मित्रता कब यौन शोषण में बदल जाती है?

किसी से व्यक्तिगत बाते करना व व्यक्तिगत कार्य करवाना किस श्रेणी में रखा जाना चाहिए?

ये विचारणीय बिन्दु हमारे समाज की बदलती मानसिकता को भी इंगित करते हैं। शोषक और शोषित को हम विशेष लिंग में ही नहीं रख सकते क्योंकि सभी मामलों में स्त्री ही शोषित नहीं होती।

कर्यालयों में जहॉ पुरूष अपनी योग्यता सिद्ध करने का प्रयास करता है, वहीं महिलाएं भी ऐसा ही प्रयास करती हैं। ऐसी स्थिति में दोनों ही एक दूसरे के साथ कटु मनोभावों के अनुरूप व्यवहार करने लगते हैं। ये मनोभाव कभी इर्ष्या के रूप में तो कभी एक दूसरे को नीचा दिखाने के रूप में परिलक्षित होता है। कभी–कभी नीचा दिखाने के लिये यौन शोषण का आरोप एक अस्त्र के रूप में प्रयोग किया जाता है, जो इस कानून के दुरूपयोग की सम्भावना को प्रबल कर देता है।

समाज में यौन उत्पीड़न के विषय में विधान में कुछ मिथक हैं, जो वास्तविकता से बहुत दूर हैं जैसे– महिलाओं को छेड़छाड़ या उत्पीड़न में आनन्द मिलता है जबकि वास्तविकता यह है कि महिलाओं के लिये यह अपमानजनक, दर्दनाक और भयावह होता है।

यह मिथक भी है कि महिलाओं के ''नहीं'' का मतलब 'हॉ' होता है।

वास्तविकता यह है कि पुरूषों द्वारा अपनी यौन आक्रमकता और एकतरफा यौन अग्रिमों को न्यायोचित ठहराने का प्रयास होता है।

इसी प्रकार यह भ्रम भी है कि यदि महिला चुप है तो वह इसे पसन्द करती है। जबकि वास्तविकता होती है कि महिलाएं कलंकित होने व बदले की कार्यवाही के भय से चुप हो जाती है।

मानवीय समाज के अनेक ऐसे पक्ष हैं जो सभ्य समाज को सोचने पर बाध्य करते हैं कि हम और हमारा समाज कहां जा रहा है? भारतीय संस्कृति, भारतीय परम्पराओं को आज की युवा पीढ़ी क्यों भूल रहीं है? आदि।

कानून ने मानवीय समाज के व मानवीय मूल्यों की रक्षार्थ अनेक उपागम बना दिये किन्तु हमारा मानवीय समाज इन उपबन्धों को किस प्रकार देखता, समझता व पालन करता है। यह महत्वपूर्ण है।

निवारक उपायों पर भी ध्यान देना चाहिए।

- यौन उत्पीड़न पर कार्यकर्ताओं की बैठक, नियोक्ता कर्मचारी की बैठक और इस विषय पर सकारात्मक चर्चा की जानी चाहिए।
- प्रत्येक कार्यालय में महिला कर्मचारियों के अधिकारों के विषय में दिशा निर्देश प्रमुखता से प्रदर्शित किया जाना चाहियें।
- यदि यौन उत्पीड़न बाहरी लोगों द्वारा किया गया हो तो भी नियोक्ता को प्रभावित व्यक्ति की सहायता करनी चाहिए।
- शिकायत समिति के सदस्यों के सम्पर्क नम्बर और नाम प्रमुखता से प्रदेर्शित किया जाना चाहियें।
- नियोक्ता द्वारा यौन उत्पीड़न को गम्भीर अपराध के रूप में पहचाना जाये।
- नियोक्ता एक विशेषी यौन उत्पीड़न नीति तैयार करें।
- नियोक्ता गवाहों और पीड़ित की गोपनीयता का संरक्षण करें व दोषी के विरूद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही करे।

सुझाव

- निवारक उपायों का पालन किया जाये।
- प्रत्येक महिला को अपने अधिकारों व कर्तव्यों की जानकारी करायी जाये।
- प्रत्येक कामकाजी महिला तत्काल प्रयोग में आने वाले सुरक्षित उपकरणों जैसे स्प्रे आदि को अपने साथ लेकर चलें।

- अति निजता की बातें अपने सहकर्मियों से न करे, विशेषतया पुरूष सहकर्मी से।
- एकान्त में वार्ता करने से बचना चाहियें।
- कोई भी अतिरिक्त कार्य करने की जिम्मेदारी लिखित में प्राप्त करे।
- किसी भी संस्था में कार्य करने से पूर्व वहां के नियम व शर्तों को भलीभॉति समझ ले।

उपसंहार

कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न एक वैश्विक समस्या है, पर भारत में यह बहुत व्यापक है। यह पहली बार एक महिला के मौलिक अधिकारों के रूप में संविधान के अनुच्छेद 19 के तहत स्वीकार किया गया।

आश्चर्य और दुःख की बात यह है कि कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न की समस्या के मामलों में वृद्धि बहुत तेजी से हुई पर अधिकतर मामलों में सम्बन्धित अधिकारियों को इसकी रिपोर्ट तक नहीं हैं।

जबकि भारत के संविधान के 14, 15 और 21 अनुच्छेद किसी भी प्रकार के भेदभाव के विरूद्ध संरक्षण प्रदान करते हैं।

सर्वोच्च न्यायालय ने दो एतिहासिक निर्णय विशाखा बनाम राजस्थान 1997 और परिधान निर्यात संवर्धन परिषद् बनाम ए0 के0 चोपड़ा 1999 में इस तरह की घटनाओं की रोकथाम सुनिश्चित करने के लिये कुछ दिशा निर्देश व उपाय बताये थे।

न्यायालय, पुलिस, विभन्न महिला संगठन और नियोक्ता अपने उत्तरदायित्व तभी पूर्ण कर सकते हैं, जब प्रत्येक महिला अपने प्रति सजग रहे और सजगता को विस्तृत अर्थ में ग्रहण करे। जैसे अपने व्यवहार, आचरण, विचार, स्थिति और कार्यो के प्रति सोचकर समझकर सर्तकतापूर्वक तथा सावधानी से आगे बढ़ने व कार्य करने का निर्णय ले, क्योंकि स्वयं की जागरूकता से उत्तम कोई स्वयं को सुरक्षित करने का अन्य हथियार नहीं है।

सन्दर्भ सूची

- लड़ाकू कानून (2003) मानव अधिकार पत्रिका
- Sadani, Harish (2003), Man against Violence and Abuse
- रिपोर्ट (1999) कार्यस्थल पर महिलाओं के यौन उत्पीड़न की रोकथाम, प्रौढ़ एवं सतत शिक्षा विस्तार विभाग, मुम्बई विश्वविद्यालय पर कार्यशाला।
- पटेल, विभूति (2002) नई सहस्त्राब्दी, ज्ञान प्रकाशन, दिल्ली।
- Rebecca J.Cook-
  Feminism in the SubContinent and Beyaond, F B C Publishing (P) Ltd. 34-A, Lalbagh, Lucknow.

(डा0 सुधा मिश्रा)
सहायक आचार्य
शिक्षा शास्त्र विभाग,
नगर निगम डिग्री कॉलेज,
लखनऊ।

मध्यस्थता का व्यवहारिक आधार

डॉ0 श्रीमती सुधा मिश्रा, असिस्टेन्ट प्रोफेसर/परामर्शदात्री

भारतीय परम्परा में विवाह एक संस्कार व दो व्यक्तियों के बीच अटूट बन्धन माना जाता है। आज से दो दशक पूर्व विवाह को चुनाव करने व इच्छा न होने जैसी बातों से परे समझा जाता था। एक बार विवाह हो गया तो वह कई जन्मों का बन्धन माना जाता था, ईश्वरीय विधान के अतिरिक्त उसे समाप्त करने जैसी व्यवस्था समाज में नगण्य थी।

शनैः शनैः मानवीय सोच व समाज में परिवर्तन होने लगा। वर्तमान में विवाह दो व्यक्तियों के बीच आपसी समझ व इच्छा के ऊपर बहुत सीमा तक निर्भर हो गया।

मैंने अपने पारिवारिक न्यायालय के परामर्शदात्री के रूप में यह अनुभव किया कि समाज में पारिवारिक विघटन की स्थितियां अधिक उत्पन्न हो रही हैं।

वर्तमान में पारिवारिक विघटन विभिन्न धर्म, जातियां, विभिन्न आय वर्ग व विभिन्न सामाजिक स्तर पर होने लगा है। जैसे–जागरूकता प्रत्येक स्तर पर और प्रत्येक स्थितियों में हुई हैं, उसी प्रकार वैवाहिक सम्बन्धों में भी आई हैं। अब प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह शहर का हो या गॉव का हो, अधिकारों के प्रति बहुत अधिक सचेत हो गया है, परिणामस्वरूप पारिवारिक न्यायालयों में केवल पति–पत्नी ही नहीं, वरन् अपने भरण पोषण के लिए माता–पिता, पुत्र–पुत्री, पुत्रवधु आदि सभी आते हैं, जिनके मध्य मध्यस्थता के माध्यम से हम लोग बहुत सीमा तक लोगों को सन्तुष्ट करने में सफल होते हैं।

50 प्रतिशत लोग अपने मामलों को मध्यस्थता के ही माध्यम से हल कराना चाहते हैं, जिसके परिणामस्वरूप मामले अदालत के ऊपर भार नहीं बनते।

मैं अपने 10 वर्ष से निरन्तर परामर्शदात्री के रूप में यह अनुभव कर रही हूँ कि पति–पत्नी के मध्य बहुत छोटी–छोटी बातों को लेकर मन–मुटाव हो जाता है जो कि संवादहीनता में तब्दील हो जाता है, जब यह स्थिति दोनों के मध्य आ जाती है तो दोनों पक्षों के परिवारजन अधिक सक्रिय हो उठते हैं, तब दोनों का सम्बन्ध अधिक खराब हो जाता है।

कार्य की समयावधि, पैसों की आवश्यकता, महत्वकांक्षा आदि ऐसे तत्व हैं, जो कि पति–पत्नी के मध्य समर्पण व त्याग की भावना को न उत्पन्न करके प्रतिद्वन्द्विता की भावना उत्पन्न कर देते हैं।

ऐसी परिस्थिति में मध्यस्थता एक ऐसे उपकरण के रूप में कार्य करती है, जो कि धीरे–धीरे पति–पत्नी के आपसी सम्बन्धों में मधुरता लाती है।

वर्तमान में परामर्शकेन्द्रों पर निरन्तर अधिक संख्या में लोग आने लगे है, जिनमें अधिकतर ऐसे लोग होते हैं, जिनके पास समय की कमी, पैसों की कमी व मामले को अतिशीघ्र समाप्त करने की इच्छा होती है।

मध्यस्थता की विधिक रूप से मान्यता के कारण लोगों का विश्वास बहुत अधिक परामर्शदात्री के ऊपर बढ़ गया है जो कि न्यायालयों के ऊपर भार की कमी के रूप में देखा जाता है।

हम लोग गॉवों में भी जाकर लोगों की छोटी–छोटी समस्याओं का समाधान करते हैं। गॉवों के सभी आयु वर्ग के लोग हमारे पास विभिन्न समस्याओं को लेकर आते हैं, जिनको आवश्यकतानुसार विधिक जानकारी भी दी जाती है। मध्यस्थता जब गांवों में समस्या समाधान का आधार बनती है तो लोगों में व्यक्तिगत ज्ञान व धन की कमी के कारण उत्पन्न हुई असहाय की स्थिति समाप्त होने लगती है और वह अपने अधिकारों के साथ–साथ कर्तव्यों के प्रति भी जागरूक हो उठता है।

PRACTICAL ASPECT OF MEDIATION

Dr. Smt. Sudha mishra, Asst. prof./ adviser

The Marriage is known to be one of rituals and supposed to be unbreakable relation between two persons, according to Indian tradition. The Marriage is supposed to be away from thoughts of election and unwillingness before last two decades from now. Once solemnized It is supposed to be a relation of birth to birth, which cannot be broken by the things any other than the Act of God, Almighty.

Human ideology of the society getting change gradually. The marriage, now a days, mostly depends on mutual willingness and wishes of two persons.

I, during my tenure of adviser of family court, have experienced deeply that there arose mostly situations of breakage of family in the society.

The family breakage, now –a- days is occurring at deferent religious groups, costs, income groups of society. Awareness in marital relations are occurring now, like Awareness in other things at each level and situation of society. Every person whether belong to rural or urban area, has become aware about their rights and duties now. Consequently, not only husband-wife but all persons like mothers–fathers, sons– daughters, daughters-in laws are approaching the family courts also. We are getting success in satisfying them through mediation.

50% people likes their matters be settled through mediation, therefore these matters does not creates any burden on courts.

I, am experiencing continuously since last 10 years of my tenure as adviser of family court that some pity things are creating confusions between husband and wife, which converse into lack of conversation between them. Other members of the family become active due to this, and then the relation between them goes verse due to this situation.

The limitation of time of work, financial need and hypothesis are such a matter, which are creating joylessly, in stead of submissiveness and forgiveness between relationship of husband-wife. In this situation, mediation becomes a tool of creating sweetness in their relationship gradually.

The maximum members of persons approaching the advisory centers, who have lack of time, lack of money but who are keen in settling their dispute.

The advisers of family courts are getting confidence of public due to legal value of the mediation, which is being seen as a tool of releasing the burden of courts.

We are solving pity disputes by visiting villages. The villagers of deferent of deferent income group are approaching us with their problems, whom we give legal information, according their needs. This way mediation become a problem solving basis in the situation which arose due to lack of personal knowledge ,lack of money and helplessness of People and they become aware of their rights and duties.

डॉ0 सुधा मिश्रा, यू0पी0 स्टेट लीगल सर्विस अथॉरिटी, लखनऊ काउन्सलर हैं। डॉ0 सुधा मिश्रा अनुभवी काउन्सलर हैं व पिछले लगभग 10–12 वर्षो से एक संवेदनशील काउन्सलर के रूप में अपनी सेवा दे रही हैं। इन्होंने अपने सेवाकाल में बहुत–से टूटे परिवारों को जोड़ने का कार्य किया है। काउन्सलिंग के दौरान ये दोनों पक्षों की समस्याओं को सुनकर बहुत ही सरलता के साथ उन्हें मिलाने का कार्य करती हैं। ये उन्हें समझाती हैं कि परिवार को साथ लेकर चलने में अनेक प्रकार की कठिनाईयॉ जीवन में आती हैं, परन्तु इनसे दूर भागने की बजाये इन समस्याओं को अच्छे ढंग से निपटाते हुए परिवार को साथ लेकर चलना चाहिए। एक सफल व्यक्ति वही है जो परिवार को बचाने की कोशिश करे। डॉ0 सुधा मिश्रा, बहुत ही अच्छे ढंग से दोनों पक्षों के बीच मध्यस्थता करती हैं व लोगों के अन्दर भावना देती है और दाम्पत्य जीवन क्या है, किस प्रकार से दाम्पत्य जीवन को सुखमय बनाया जाये, इन बातों पर छोटी–छोटी टिप्स देती हैं और दोनों पक्षों के बीच जितनी भी गलतफहमियां हैं उन्हें दूर करने का प्रयास करती हैं। डॉ0 सुधा मिश्रा के पास हिन्दू, मुस्लिम सहित हर वर्ग के लोग एवं युवा वर्ग, वृद्ध एवं प्रौढ़ावस्था के लोग अपनी पारिवारिक समस्याओं को लेकर आये व डॉ0 सुधा मिश्रा द्वारा बहुत ही सरलता के साथ इनके बीच मध्यस्थता करके उन्हें समझाया गया कि किसी के अवगुण को न देखें, अवगुण को देखने से पारिवारिक समस्या का हल नहीं होता है। डॉ0 सुधा मिश्रा द्वारा लोगों के अन्दर जो अहं की भावना होती है, उसको दूर करने का प्रयास किया गया व कईं परिवारों को टूटने से बचाया गया। इस तरीके से डॉ0 सुधा मिश्रा द्वारा एक बहुत ही सफल काउन्सलर के रूप में कार्य किया जा रहा है।

डॉ0 श्रीमती सुधा मिश्रा, असिस्टेन्ट प्रोफेसर / परामर्शदात्री

यू0पी0 स्टेट लीगल सर्विस अथॉरिटी, लखनऊ में काउन्सलिंग के दौरान मेरे द्वारा कुल 70 मामलों को सुलझाया गया। इनमें से लगभग 45–50 मामले ऐसे थे, जिनमें पीड़ित पक्ष यह चाहते थे कि उनका मामला परामर्श केन्द्र से ही निस्तारित हो जाये व उन्हें आगे न जाना पड़े। लगभग 10–15 मामले ऐसे थे, जिनमें पीड़ित पक्षों को इसके बारे में जानकारी ही नहीं थी।